International Journal of Trend in Scientific Research and Development (IJTSRD)
Advanced Studies of Multidisciplinary Research and Analysis – November 2023
Available Online: www.ijtsrd.com e-ISSN: 2456 – 6470

स्कंदपुराण में आनंदवाद

बिंदू राजपूत [1], डॉ. निहारिका चतुर्वेदी [2]

[1]शोधकत्री, संस्कृत, एस. आर. के. (पीजी) कॉलेज, फिरोजाबाद, उत्तर प्रदेश

[2]एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, एस. आर. के. (पीजी) कॉलेज, फिरोजाबाद, उत्तर प्रदेश

सार

आनंदवाद उस विचारधारा का नाम है जिसमें आनंद को ही मानव जीवन का मूल लक्ष्य माना जाता है। विश्व की विचारधारा में आनंदवाद के दो रूप मिलते हैं। प्रथम विचार के अनुसार आनंद इस जीवन में मनुष्य का चरम लक्ष्य है और दूसरी धारा के अनुसार इस जीवन में कठोर नियमों का पालन करने पर ही भविष्य में मनुष्य को परम आनंद की प्राप्ति होती है।

परिचय

दृषद्विचित्रतल्पयोर्भुजङ्गमौक्तिकस्रजो-
र्गरिष्ठरत्नलोष्ठयोः सुहृद्विपक्षपक्षयोः ।
तृणरविन्द्चक्षुषोः प्रजामहीमहेन्द्रयोः
समप्रवृत्तिकः कदा सदाशिवं भजाम्यहम् ।।

अन्वय

दृषद् – विचित्र तल्पयोः भुजंग – मौक्तिकस्रजोः गरिष्ठरत्न – लोष्ठयोः सुहृद् विपक्ष – पक्षयोः तृण – अरविंदचक्षुषोः प्रजा – महीमहेन्द्रयोः समप्रवृत्तिकः अहं कदा सदाशिवं भजामि ।

भावार्थ

शिला व रंगबिरंगी शैय्या में, सर्प व मोतियों की माला में, महामूल्यवान रत्न व मिट्टी के ढेले में, मित्र व शत्रुपक्ष में, तृण व कमल सदृश नेत्रों में, प्रजा व महाराजा में कब मेरी प्रवृत्ति एक समान होगी तथा कब मैं सदाशिव की उपासना करूँगा ।[1]

व्याख्या

शिवताण्डवस्तोत्रम् के १२ वें श्लोक में भगवान सदाशिव के अनुराग में आप्लावित रावण का अंतःकरण कहता है कि उसे भक्ति के मार्ग में सबके प्रति समदृष्टि रखनी चाहिये । वह सदाशिव की प्रसन्नता का आकांक्षी है । लंकेश बनने के पहले उसने उग्र तपस्या भी की थी । अपरिमित बल के स्वामी रावण कठिनाइयों से लड़ने में सक्षम था । शिव-चिन्तन में निमग्न होकर वह सोचने लगता था कि विलास-ऐश्वर्य में मैं कब तक यों ही डूबा रहूँगा ।

रावण ध्वनिक्रमप्रववर्तितप्रचण्डताण्डव करते हुए भगवान शिव के दर्शन पाकर उनकी जयजयकार करता है । शिव के ध्यान में परायण होने से उसका चित्त संयत होता है । भक्त -लेखक श्री सुदर्शन सिंह 'चक्र' का कथन है कि ईश के दर्शन के उपरांत जीव की आसुरी वृत्तियों पर आघात होता है, चाहे अल्प समय के लिए ही क्यों न हो, पर होता अवश्य है । (श्री चक्र की कहानी 'असुर उपासक' से) यही रावण के साथ भी हुआ । मृदंग का मंगल रव और महानर्तक महेश्वर की ताण्डव- चेतना उसके मन में सात्विक भावों का उद्रेक करती हैं । संसार की बहुमूल्य वस्तुएं मानो अपना मूल्य खोती चली जाती हैं । त्रिलोक के भोगों व रागरंग से रंजित पदार्थों के रंग फीके पड़ते जाते हैं । शिव के प्रति प्रवृत्त हुआ मन अब भक्ति-लभ्य शांति से पृथक होना नहीं चाहता, किन्तु उसकी अपनी अस्मिता को, उसके मातृकुल से प्राप्त दैत्य-संस्कारों को उसकी शांकर -चेतना मानो शुष्क किये जा रही है । उसका अन्तःकरण कहीं इस आंदोलन से आक्रांत है । चित्त में उठते और उमड़ते सात्विक भाव उसे ममत्व से समत्व की दिशा में ले जाते हैं । उसके परमाराध्य तथा परम आदर्श शिव का तो चिंतन ही मोहापहारी है, "विमोहनं हि देहिनां सुशङ्करस्य चिंतनम्" यही स्वयं रावण का कथन है, आने वाले १६ वें श्लोक में । निष्ठावान शिष्य के लिए गुरु-चरण ही उसका परम आदर्श होते हैं और जीव की सहज इच्छा होती है कि अपने आदर्श का ,श्रद्धेय का पदानुसरण करे । भगवान भालभूषण रावण के गुरु थे और उसने उनसे शस्त्रज्ञान और विज्ञानं सहित ज्ञान भी पाया था । स्कन्दपुराण के अनुसार "ज्ञानं विज्ञानसहितं लब्धतेन सदाशिवात् ।" भगवान शिव निरपेक्ष एवं समभाव वृत्ति धारण किये हुए हैं । स्कन्द पुराण के वैष्णव खंड में शिव का यह कथन द्रष्टव्य है, जिसमें वे कहते हैं कि एकादशी तिथि वाले दिन मैं विष्णु-मंदिर में जागरण करके नृत्य करता हूँ, तथा ब्रह्मा व हरि के प्रीत्यर्थ तपस्या करता हूँ ।

एकादश्यां प्रनृत्यामिजागरे विष्णु सद्मनि ।
सदा तपस्या चरामि प्रीत्यर्थ हरिवेधसोः।
— स्कन्द पुराण (वैष्णव खंड)

उक्त कथन शिवजी की निष्पक्ष मनोवृति का परिचायक है । अपने आराध्य की सरलता पर मुग्ध और परम श्रद्धा से युक्त अपने विचार-वारिद से घिरा हुआ रावण सोचता है कि न जाने मैं ऐसा क्यों हूँ ! क्यों मैं पत्थरों को बहुमूल्य समझता हूँ जबकि वे मिट्टी के ढेले-भर से बढ़ कर कुछ नहीं हैं । उसके आराध्य

उसके परमादर्श हैं ।वे आशुतोष अहि-भूषण हैं, तब वह क्यों मुक्तामाल धारण करे, वे कैलाशविहारी और वनचारी अनिकेत भी तो हैं, तब वह पाषाण को अपनी शय्या क्यों न बनाये ? शिव को सभी प्रिय हैं । वे असुरों को भी निष्पक्ष भाव से बड़े से बड़ा वरदान देकर उन पर अनुग्रह करते हैं । स्कन्दपुराण का कहना है कि वही जन सच्चा भक्त है, जो शत्रु-मित्र को एक समान भाव से देखे ।[2]

आत्मवत्सर्वभूतानि ये पश्यन्ति नरोत्तमाः ।
तुल्याः शत्रुषु मित्रेषु ते वे भागवताः
— स्कन्द पुराण, वैष्णव खंड

इसका अर्थ है कि जो नरोत्तम सब प्राणियों को अपने समान ही देखा करते हैं तथा जो शत्रुता रखने वालों और मित्रों में समतुल्य भावना रखते हैं; वे ही भागवत (जन) कहे गए हैं ।

श्मशान-निलय शिव की सरलता पर मुग्ध हुआ रावण श्रद्धा से आप्लावित होकर सोचता है कि न जाने मैं ऐसा क्यों हूँ ! क्यों मैं रत्नों-पत्थरों को बहुमूल्य समझता हूँ जबकि वे मिट्टी के ढेले के समान ही तुच्छ हैं, क्योंकि उसकी भक्ति-स्निग्ध दृष्टि में तो केवल शिव ही परम मूल्यवान हैं । उसके आराध्य उसके परम आदर्श हैं । वह सोचता है कि उसके परम प्रिय शंकर पन्नग-भूषण हैं तो उसके मुक्तामाला धारण करने का अर्थ ही क्या रहता है ? वे कैलाशबिहारी और वनचारी अनिकेत भी तो हैं तब वह पाषाण को अपनी शय्या क्यों न बनाये ? जब वे 'सुहृद् सर्वभूतानां' हैं तो वह भी सब से मित्र-भाव या अशत्रुता के भाव से क्यों न रहे ? शिव के सेवक-पद से क्या महाराजा का पद अधिक बढ़ कर है ? कामदलन कपर्दी का शिष्य कामिनियों में मत्त क्यों रहे ? इसी तरह के विचार शिव-शिष्य रावण को मथते प्रतीत होते हैं । इसीलिए ससद्वीपाधिपति रावण अपने आप से पूछने लगता है कि मैं पाषाण-शिला व रंगबिरंगी रत्नखचित शय्या, सर्प व मुक्तमाल एवं बहुमूल्य रत्न और मिटटी के ढेले के प्रति तथा मित्रपक्ष व शत्रुपक्ष के साथ समप्रवृत्तिकः रहता हुआ, कब एक-सी प्रवृत्ति रख पाऊंगा ? मेरे जीवन में ऐसा कब होगा कि मैं कमलनयनी रमणियों के कटाक्षों को तृणवत् तुच्छ लेखूँ तथा प्रजाजन व महाराजाधिराज के साथ एक-से भाव का समाचरण करूँ, और ऐसा करते हुए शिवाराधन में मग्न रहूँ । यदि कहीं ऐसा सम्भव हो जाए तो मैं धन्य हो जाऊं । वे अकारणकरुणावरुणालय कब अपने भक्त से दूर हुए हैं । रावण पद, प्रभुत्व, पदार्थ, प्रियजन व प्रियदर्शिनी स्त्रियों के प्रति अन्यमनस्क होता हुआ, अपने गुरु, अपने ईश को रिझाये रखना चाहता है । उन्हीं के आदर्शों का अनुसरण करता हुआ सृष्टि के समस्त प्राणी व पदार्थों में एक-सी दृष्टि रखते हुए, समप्रवृत्ति वाला होकर रहना चाहता है ।

विद्वान भक्त-लेखक श्री सुदर्शन सिंह 'चक्र' अपनी असुर उपासक नामक कहानी में कहते हैं कि अनुराग सदा निरपेक्ष होता है । प्रेम की कोई अपेक्षा नहीं होती। रावण के राग का यहाँ उदात्तीकरण हुआ है । उसका राग शिवोन्मुखी है और उन्हीं से अनुरंजित है उसका अनुराग । पदार्थों की निस्सारता के बोध से, भोगैषणा से उसे वितृष्णा-सी हो उठी है । अभिलाषा केवल कैवल्यनाथ की है । वस्तुतः राग और ममत्व के प्रभाव के शिथिल हो जाने पर जीव में समत्व का भाव जागृत होता है । ममत्व से समत्व नहीं सधता है । दोहावली में गोस्वामी तुलसीदास भी कहते हैं,

"तुलसी ममता राम सों
समता सब संसार"
–दोहावली -९४ —

शिव के दर्शननार्थ एवं शरणार्थ आये हुए देवताओं से नंदी कुछ इसी आशय की बात कहते हैं कि जब तक बहुत प्रकार के विषय मन में प्रविष्ट हैं और जब तक ममत्व-भाव ह्रदय में स्थित है, तब तक भगवान शिव परम दुलभ हैं । यह प्रसंग स्कन्दपुराण' के महेश्वर खंड में वर्णित है ।

सागर में जैसे सीपी, मुक्त आदि मिलते हैं साथ ही मीन-मकर आदि भी, वैसे ही मन के सागर में भी यह सब कुछ पाया जाता है । मात्सर्य आदि मल से मुक्त हो के मन का निर्मल सरोवर – मान सरोवर बनता है। मानसरोवर कैलाश पर अवस्थित है, जहाँ ताण्डव नृत्य करके शिव संहारोपरांत सृजन और सृजनोपरांत संहार करते हैं । मान सरोवर आनन्द-लहरियों का मूक दर्शक है । वस्तुतः निर्मल मन शिव-ताण्डव को उसकी भव्यता तथा गरिमा में देख सकता है । उसके अनन्तर कुछ देखना शेष नहीं रह जाता । जीव स्वयमेव समप्रवृत्तिक हो जाता है 'सुहृदं सर्वभूतानांम्' की अकारण करुणा से । मोक्ष के प्रति एक दृष्टि है निर्वाण और अपर दृष्टि है, जीवन को हर्ष-विषाद आदि की विषम स्थितियों से निकल कर समत्व, शिवत्व अथवा अखंड आनंद में लीन करना । समरसता व तत्प्रसूत आनंदवाद शैव-दर्शन में महत्वपूर्ण स्थान रखता है ।

विचार-विमर्श

विभिन्न विषयों के विस्तृत विवेचन की दृष्टि से स्कन्दपुराण सबसे बड़ा पुराण है।[3] भगवान स्कन्द (कार्तिकेय) के द्वारा कथित होने के कारण इसका नाम 'स्कन्दपुराण' है। इसमें बद्रिकाश्रम, अयोध्या, जगन्नाथपुरी, रामेश्वर, कन्याकुमारी, प्रभास, द्वारका, काशी, शाकम्भरी, कांची आदि तीर्थों की महिमा; गंगा, नर्मदा, यमुना, सरस्वती आदि नदियों के उद्गम की मनोरथ कथाएँ; रामायण, भागवतादि ग्रन्थों का माहात्म्य, विभिन्न महीनों के व्रत-पर्व का माहात्म्य तथा शिवरात्रि, सत्यनारायण आदि व्रत-कथाएँ अत्यन्त रोचक शैली में प्रस्तुत की गयी हैं। विचित्र कथाओं के माध्यम से भौगोलिक ज्ञान तथा प्राचीन इतिहास की ललित प्रस्तुति इस पुराण की अपनी विशेषता है। आज भी इसमें वर्णित विभिन्न व्रत-त्योहारों के दर्शन भारत के घर-घर में किये जा सकते हैं।

इसमें लौकिक और पारलौकिक ज्ञान के अनन्त उपदेश भरे हैं। इसमें धर्म, सदाचार, योग, ज्ञान तथा भक्ति के सुन्दर विवेचन के साथ अनेकों

साधु-महात्माओं के सुन्दर चरित्र पिरोये गये हैं। आज भी इसमें वर्णित आचारों, पद्धतियों के दर्शन हिन्दू समाज के घर-घर में किये जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त इसमें भगवान शिव की महिमा, सती-चरित्र, शिव-पार्वती-विवाह, कार्तिकेय-जन्म, तारकासुर-वध आदि का मनोहर वर्णन है।[1]

इस पुराण के माहेश्वरखण्ड के कौमारिकाखण्ड के अध्याय २३ में एक कन्या के पालन के फल को दस पुत्रों के बराबर कहा गया है-

दशपुत्रसमा कन्या दशपुत्रान्प्रवर्द्धयन्।
यत्फलं लभते मर्त्यस्तल्लभ्यं कन्ययैकया॥ २३.४६ ॥

(एक पुत्री के पालन पोषण के पुण्य दस पुत्रों के समान है। कोई व्यक्ति दस पुत्रों के लालन-पालन से जो फल प्राप्त करता है वही फल केवल एक कन्या के पालन-पोषण से प्राप्त हो जाता है।

यह खण्डात्मक और संहितात्मक दो स्वरूपों में उपलब्ध है। दोनों स्वरूपों में ८१-८१ हजार श्लोक परम्परागत रूप से माने गये हैं। खण्डात्मक स्कन्द पुराण में क्रमशः माहेश्वर, वैष्णव, ब्राह्म, काशी, अवन्ती (ताप्ती और रेवाखण्ड) नागर तथा प्रभास -- ये सात खण्ड हैं। संहितात्मक स्कन्दपुराण में सनत्कुमारसंहिता, शंकरसंहिता, ब्राह्मसंहिता, सौरसंहिता, वैष्णवसंहिता और सूतसंहिता -- छः संहिताएँ हैं।[4]

विस्तार

स्कन्द पुराण मूल रूप में एक शतकोटि पुराण है, जिसमें शिव की महिमा का वर्णन किया गया है। उसके सारभूत अर्थ का व्यासजी ने स्कन्दपुराण में वर्णन किया है। स्कन्द पुराण इक्यासी हजार श्लोकों से युक्त है एवं इसमें सात खण्ड हैं। पहले खण्ड का नाम माहेश्वर खण्ड है, इसमें बारह हजार से कुछ कम श्लोक हैं। दूसरा वैष्णवखण्ड है, तीसरा ब्रह्मखण्ड है। चौथा काशीखण्ड एवं पाँचवाँ अवन्तीखण्ड है; फिर क्रमशः नागर खण्ड एवं प्रभास खण्ड है।[2]

स्कन्द पुराण के कई संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। प्राचीन संस्करणों में नवल किशोर प्रेस, लखनऊ एवं वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई के संस्करण हैं। इन दोनों संस्करणों के साथ-साथ एक बांग्ला संस्करण के आधार पर भी स्कन्द पुराण के पाँच खण्डों का संपादित संस्करण 1960-62 ई० में मनसुखराय मोर, 5 क्लाइव रा◌ॅ, कलकत्ता से छह जिल्दों में प्रकाशित हुआ। इसी के साथ नागर तथा प्रभास खण्ड को भी मिलाकर सम्पूर्ण स्कन्द पुराण (मूलमात्र) अब चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, वाराणसी से प्रकाशित है।[3] इसी संस्करण से श्लोकों की गणना करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि स्कन्द पुराण में कालान्तर में कम से कम तेरह हजार श्लोक प्रक्षिप्त रूप में शामिल हो गये हैं। श्लोकों की कुल संख्या 81,100 की अपेक्षा 94,410 हो गयी हैं; जबकि कुल संख्या विभिन्न पुराणों में उल्लिखित संख्या (81,100) से कुछ हजार कम ही होनी चाहिए थी, क्योंकि पुराणगत प्राचीन गणना में श्लोकों के साथ उवाचों की संख्या भी मिली रहती थी। यह स्वतंत्र शोध का विषय है। बहरहाल यहाँ उक्त संस्करण से अध्याय सहित श्लोकों की सम्पूर्ण संख्या दी जा रही है।

परिणाम

संरचना

#	खण्ड	उपखण्ड	अध्याय-संख्या	श्लोक-संख्या
1	माहेश्वर खण्ड	३ ; केदार, कौमारिका, अरुणाचल	138	11,997
2	वैष्णव खण्ड	९ ; वेङ्कटाचलमाहात्म्य, पुरुषोत्तमक्षेत्रमाहात्म्य, बद्रिकाश्रममाहात्म्य, कार्तिकमासमाहात्म्य, मार्गशीर्षमासमाहात्म्य, भागवतमाहात्म्य, बैशाखमासमाहात्म्य, अयोध्यामाहात्म्य, वासुदेवमाहात्म्य	232	13,846
3	ब्राह्म खण्ड	३ ; सेतुमाहात्म्य, धर्मारण्य खण्ड, ब्रह्मोत्तर खण्ड	146	11,501
4	काशी खण्ड	२ ; पूर्वार्ध, उत्तरार्ध	100	11,714
5	अवन्त्य खण्ड	३ ; अवन्तिक्षेत्रमाहात्म्य, चतुरशीतिलिङ्गमाहात्म्य, रेवाखण्ड	403	16,005
6	नागर खण्ड	१ ; तीर्थमाहात्म्य	279	14,932
7	प्रभास खण्ड	४ ; प्रभासक्षेत्रमाहात्म्य, वस्त्रापथक्षेत्रमाहात्म्य, अर्वुद खण्ड, द्वारकामाहात्म्य	492	14,415
=	कुल सात खण्ड		कुल अध्याय=1,790	कुल श्लोक=94,410

'वेंकटेश्वर प्रेस' से (मूलमात्र) पूर्व प्रकाशित तथा अब 'नाग प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली' से श्लोकानुक्रमणिका के एक अतिरिक्त खंड सहित कुल 8 खंडों में पुनर्मुद्रित संस्करण[4] में श्लोकों की कुल संख्या 90,571 है। अर्थात् इसमें भी प्रचलित संख्या से करीब साढ़े नौ हजार श्लोकों का आधिक्य है।

संक्षिप्त वर्णन

स्कन्द पुराण में विभिन्न उपखण्डों को समाहित करते हुए सम्मिलित रूप में कुल सात खण्ड हैं, जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है-

माहेश्वरखण्ड

पहले खण्ड का नाम माहेश्वर खण्ड है, यह परम पवित्र तथा विशाल कथाओं से परिपूर्ण है, इसमें सैकडों उत्तम चरित्र है। माहेश्वर खण्ड के

भीतर केदार माहात्मय में पुराण आरम्भ हुआ है, उसमें पहले दक्ष यज्ञ की कथा है, इसके बाद शिवलिंग पूजन का फ़ल बताया गया है, इसके बाद समुद्र मन्थन की कथा और देवराज इन्द्र के चरित्र का वर्णन है, फ़िर पार्वती का उपाख्यान और उनके विवाह का प्रसंग है, तत्पश्चात कुमार स्कन्द की उत्पत्ति और तारकासुर के साथ उनके युद्ध का वर्णन है, फ़िर पाशुपत का उपाख्यान और चण्ड की कथा है, फ़िर दूत की नियुक्ति का कथन और नारदजी के साथ समागम का वृतान्त है, इसके बाद कुमार माहात्म्य के प्रसंग में पंचतीर्थ की कथा है, धर्मवर्मा राजा की कथा तथा नदियों और समुद्रों का वर्ण है, तदनन्तर इन्द्रद्युम्न और नाडीजंग की कथा है, फ़िर महीनदी के प्रादुर्भाव और दमन की कथा है, तत्पश्चात मही साकर संगम और कुमारेश का वृतान्त है, इसके बाद नाना प्रकार के उपाख्यानों सहित तारक युद्ध और तारकासुर के वध का वर्णन है, फ़िर पंचलिंग स्थापन की कथा आयी है, तदनन्तर द्वीपों का पुण्यमयी वर्णन ऊपर के लोकों की स्थिति ब्रह्माण्ड की स्थिति और उसका मान तथा वर्करेशकी कथा है, फ़िर वासुदेव का मात्म्य और कोटितीर्थ का वर्णन है। तदनन्तर गुप्तक्षेत्र में नाना तीर्थों का आख्यान कहा गया है, पाण्डवों की पुण्यमयी कथा और बर्बरीक की सहायता से महाविद्या के साधन का प्रसंग है, तत्पश्चात तीर्थयात्रा की समाप्ति है, तदनन्तर अरुणाचल का माहात्मय है तथा सनक और ब्रह्माजी का संवाद है। गौरी की तपस्या का वर्णन तथा वहां के भिन्न भिन्न तीर्थों का वर्णन है, महिषासुर की कथा और उसके वध का परम अद्भुत प्रसंग कहा गया है।[5]

वैष्णव-खण्ड

दूसरा वैष्णवखण्ड है, इसमें पहले भूमि और वाराह भगवान के संवाद का वर्णन है, फ़िर कमला की पवित्र कथा और श्रीनिवास की स्थिति का वर्णन है, तदनन्तर कुम्हार की कथा तथा सुवर्णमुखरी नदी के माहात्मय का वर्णन है, फ़िर अनेक उपाख्यानों से युक्त भरद्वाज की अद्भुत कथा है, इसके बाद मतंग और अंजन के पापनाशक संवाद का वर्णन है, फ़िर उत्कल प्रदेश के पुरुषोत्तम क्षेत्र का माहात्मय कहा गया है, तत्पश्चार मार्कण्डेयजी की कथा, राजा अम्बरीष का वृतान्त, इन्द्रद्युम्न का आख्यान और विद्यापति की शुभ कथा का उल्लेख है। ब्रह्मन ! इसके बाद जैमिनि और नारद का आख्यान है, फ़िर नीलकण्ठ और नृसिंह का वर्णन है, तदनन्तर अश्वमेघ यज्ञ की कथा और राजा आ ब्रह्मलोक में गमन कहा गया है, तत्पश्चात रथयात्रा विधि और जप तथा स्नान की विधि कही गयी है। फ़िर दक्षिणामूर्ति का उपाख्यान और गुण्डिचा की कथा है, रथ रक्षा की विधि और भगवान के शयनोत्सव का वर्णन है, इसके बाद राजा श्वेत का उपाख्यान कहा गय अहै विर पृथु उत्सव का निरूपण है, भगवान के दोलोत्सव तथा सांवत्सरिक व्रत का वर्णन है, तदनन्तर उद्दालक के नियोग से भगवान विष्णु की निष्काम पूजा का प्रतिपादन किया गया है, फ़िर मोक्ष साधन बताकर नाना प्रकार के योगों का निरूपण किया गया है, तत्पश्चात दशावतार की कथा अर स्नान आदि का वर्णन है, इसके बाद बदरिकाश्रम तीर्थ का पाप नाशक माहात्मय बताया गया है, उस प्रसंग में अग्नि आदि तीर्थों और गरुण शिला की महिमा है, वहां भगवान के निवास का कारण बताया गया है। फ़िर कपालमोचन तीर्थ पंचधारा तीर्थ और मेरुसंस्थान की कथा है, तदनन्तर कार्तिक मास का माहात्म्य प्रारम्भ होता है, उसमे मदनालस के माहात्मय का वर्णन है, धूम्रकेशका उपाख्यान और कार्तिक मास में प्रत्येक दिन के कृत्य का वर्णन है, अन्त में भीष्म पंचक व्रत का प्रतिपादन किया गया है, जो भोग और मोक्ष देने वाला है। तत्पश्चात मार्गशीर्ष के माहात्म्य में स्नान की विधि बतायी गयी है, फ़िर पुण्ड्रादि कीर्तन और माला धारण का पुण्य कहा गया है, भगवान को पंचामृत से स्नान करवाने तथा घण्टा बजाने आदि का पुण्यफ़ल बताया गया है। नाना प्रकार के फ़ूलों से भगवत्पूजन का फ़ल और तुलसीदल का माहात्म्य बताया गया है, भगवान को नैवैद्य लगाने की महिमा, एकादशी के दिन कीर्तन अखण्ड एकादसी व्रत रहने का पुण्य और एकादशी की रात में जागरण करने का फ़ल बताया गया है। इसके बाद मत्स्योत्सव का विधान और नाममाहात्म्य का कीर्तन है, भगवान के ध्यान आदि का पुण्य तथा मथुरा का माहात्म्य बताया गया है, [6] मथुरा तीर्थ का उत्तम माहात्मय अलग कहा गया है और वहां के बारह वनों की महिमा वर्णन किया गया है। तत्पश्चात इस पुराण में श्रीमदभागवत के उत्तम माहात्म्य का प्रतिपादन किया गया है इस प्रसंग में बज्रनाभ और शाण्डिल्य के संवाद का उल्लेख किया गया है जो ब्रज की आन्तरिक लीलाओं का प्रशासक है। तदनन्तर माघ मास में स्नान दान और जप करने का माहात्म्य बताया गया है, जो नाना प्रकार के आख्यानों से युक्त है, माघ माहात्म्य का दस अध्यायों में प्रतिपादन किया गया है, तत्पश्चात बैशाख माहात्म्य में शय्यादान आदि का फ़ल कहा गया है, फ़िर जलदान की विधि कामोपाख्यान शुकदेव चर्त व्याध की अद्भुत कथा और अक्षयतृतीया आदि के पुण्य मा विशेष रूप से वर्णन है, इसके बाद अयोध्या माहात्म्य प्रारम्भ करके उसमे चक्रतीर्थ ब्रह्मतीर्थ ऋणमोचन तीर्थ पापमोचन तीर्थ सहस्त्रधारातीर्थ स्वर्गद्वारतीर्थ चन्द्रहरितीर्थ धर्महरितीर्थ स्वर्णवृष्टितीर्थ की कथा और तिलोदा-सरयू-संगम का वर्णन है, तदनन्तर सीताकुण्ड गुप्तहरितीर्थ सरयू-घाघरा-संगम गोप्रचारतीर्थ क्षीरोदकतीर्थ और बृहस्पतिकुण्ड आदि पांच तीर्थों की महिमा का प्रतिपादन किया गया है, तत्पश्चात घोषार्क आदि तेरह तीर्थों का वर्णन है। फ़िर गयाकूप के सर्वपापनाशक माहात्म्य का कथन है, तदननतर माण्डव्याश्रम आदि, अजित आदि तथा मानस आदि तीर्थों का वर्णन किया गया है।

ब्रह्मखण्ड

इसमे सेतुमाहात्म्य प्रारम्भ करके वहां के स्नान और दर्शन का फल बताया गया है, फिर गालव की तपस्या तथा राक्षस की कथा है, तत्पश्चात देवीपत्तन में चक्रतीर्थ आदि की महिमा, वेतालतीर्थ का माहात्म्य और पापनाश आदि का वर्णन है, मंगल आदि तीर्थ का माहात्म्य ब्रह्मकुण्ड आदि का वर्णन हनुमत्कुण्ड की महिमा तथा अगस्त्यातीर्थ के फल का कथन है, रामतीर्थ आदि का वर्णन लक्ष्मीतीर्थ का निरूपण शंखतीर्थ की महिमा साध्यातीर्थ के प्रभावों का वर्णन है, फिर रामेश्वर की महिमा तत्वज्ञान का उपदेश तथा सेतु यात्रा विधि का वर्णन है, इसके बाद धनुषकोटि आदि का माहात्म्य क्षीरकुण्ड आदि की महिमा गायत्री आदि तीर्थों का माहात्म्य है। इसके बाद धर्मारण्य का उत्तम माहात्मय बताया गया है जिसमे भगवान शिव ने

स्कन्द को तत्व का उपदेश दिया है, फिर धर्मारण्य का प्रादुर्भाव उसके पुण्य का वर्णन कर्मसिद्धि का उपाख्यान तथा ऋषिवंश का निरूपण किया गया है। इसके बाद वर्णाश्रम धर्म के तत्व का निरूपण है, तदनन्तर देवस्थान-विभाग और बकुलादित्य की शुभ कथा का वर्णन है। वहां छात्रानन्दा, शान्ता, श्रीमाता, मातंगिनी, और पुण्यदा ये पांच देवियां सदा स्थित बतायी गयी है। इसके बाद यहां इन्द्रेश्वर आदि की महिमा तथा द्वारका आदि का निरूपण है, लोहासुर की कथा गंगाकूप का वर्णन श्रीरामचन्द्र का चरित्र तथा सत्यमन्दिर का वर्णन है, फिर जीर्णोद्धार की महिमा का कथन आसनदान जातिभेद वर्णन तथा स्मृति-धर्म का निरूपण है। इसके बाद अनेक उपाख्यानो से युक्त वैष्णव धर्म का निरूपण है। इसके बाद मुण्यमय चातुरमास्य का माहात्म्य प्रारम्भ करके उसमें पालन करने योग्य सब धर्मो का निरूपण किया गया है, फिर दान की प्रसंशा, व्रत की महिमा, तपस्या और पूजा का माहात्म्य तथा सच्छूद्र का कथन है। इसके बाद प्रकृतियों के भेद का वर्णन शालग्राम के तत्व का [7] निरूपण तारकासुर के वध का उपाय, गरुडपूजन की महिमा, विष्णु का शाप, वृक्षभाव की प्राप्ति, पार्वती का अनुभव, भगवान शिव का ताण्डव नृत्य, रामनाम की महिमा का निरूपण शिवलिंगपतन की कथा, पैजवन शूद्र की कथा, पार्वती के जन्म और चरित्र, तारकासुर का अद्भुत वध, प्रणव के ऐश्वर्य का कथन, तारकासुर के चरित्र का पुनर्वणन, दक्ष-यज्ञ की समाप्ति, द्वादशाक्षरमंत्र का निरूपण ज्ञानयोग का वर्णन, द्वादश सूर्यों की महिमा तथा चातुर्मास्य-माहात्म्य के श्रवण आदि के पुण्य का वर्णन, किया गया है, जो मनुष्यों के लिये कल्याणकारक है। इसके बाद ब्राह्मोत्तर भाग में भगवान शिव की अद्भुत महिमा पंचाक्षरमंत्र के माहात्म्य तथा गोकर्ण की महिमा है, इसके बाद शिवरात्रि की महिमा प्रदोषव्रत का वर्णन है, तथा सोमवारव्रत की महिमा एवं सीमन्तिनी की कथा है। फिर भद्रायु की उत्पत्ति का वर्णन सदाचार-निरूपण शिवकवच का उपदेश भद्रायु के विवाह का वर्णन भद्रायु की महिमा भस्म-माहात्म्य-वर्णन, शबर का उपाख्यान, उमामहेश्वर व्रत की महिमा, रुद्राक्ष का माहात्म्य, रुद्राध्याय के पुण्य तथा ब्रह्मखण्ड के श्रवण आदि की महिमा का वर्णन है।

काशीखण्ड

काशीखण्ड में विंध्यपर्वत और नारदजी का संवाद का वर्णन है, सत्यलोक का प्रभाव, अगस्त्य के आश्रम में देवताओं का आगमन, पतिव्रताचरित्र, तथा तीर्थ यात्रा की प्रसंशा है, इसके बाद सप्तपुरी का वर्णन सयंमिनी का निरूपण शिवशर्मा को सूर्य इन्द्र और अग्नि लोक की प्राप्ति का उल्लेख है। अग्नि का प्रादुर्भाव निऋति तथा वरुण की उत्पत्ति, गन्धवती अलकापुरी अर ईशानपुरी के उद्भव का वर्णन, चन्द्र सूर्य बुध मंगल तथा बृहस्पति के लोक ब्रह्मलोक विष्णुलोक ध्रुवलोक और तपोलोक का वर्णन है। इसके बाद ध्रुवलोक की पुण्यमयी कथा, सत्यलोक का निरीक्षण, स्कन्द अगस्त्य संवाद, मणिकर्णिका की उत्पत्ति, गंगाजी का प्राकट्य, गंगासहस्त्रनाम, काशीपुरी की प्रशंसा, भैरव का आविर्भाव, दण्डपाणि तथा ज्ञानवापी का उद्भव, कलावती की कथा, सदाचार निरूपण ब्रह्मचारी का आख्यान स्त्री के लक्षण, कर्तव्याकर्तव्य का निर्देश, अविमुक्तेश्वर का वर्णन, गृहस्थ योगी के धर्म, कालज्ञान, दिवोदास की पुण्यमयी कथा, काशी का वर्णन, भूतल पर माया गणपति का प्रादुर्भाव, विष्णुमाया का प्रपंच, दिवोदास का मोक्ष, पंचनद तीर्थ की उत्पत्ति, विन्दुमाधव का प्राकट्य, काशी का वैष्णव तीर्थ का दर्जा, शूलधारी शिवजी का काशी में आगमन, जोगीषव्य के साथ संवाद, महेश्वर का ज्येष्ठेश्वर नाम होना, क्षेत्राख्यान कन्दुकेश्वर और व्याघ्रेश्वर का प्रादुर्भाव, शैलेश्वर रत्नेश्वर तथ कृत्तिवाशेश्वर का प्राकट्य, देवताओं का अधिष्ठान, दुर्गासुर का पराक्रम, दुर्गाजी की विजय, ऊँकारेश्वर का वर्णन, पुन: ऊँकारेश्वर का माहात्म्य, त्रिलोचन का प्रादुर्भाव केदारेश्वर का आख्यान, धर्मेश्वर की कथा, विष्णुभुजा का प्राकट्य, वीरेश्वर का आख्यान, गंगामाहात्म्यकीर्तन, विश्वकर्मेश्वर की महिमा, दक्षयज्ञोद्भव, सतीश और अमृतेश आदि का माहात्म्य पराशरनन्दन व्यासजी की भुजाओं का स्तम्भन, क्षेत्र के तीर्थों का समुदाय, मुक्तिमण्डप की कथा विश्वनाथजी का वैभव, तदनन्तर काशी की यात्रा और परिक्रमा का वर्णन काशीखण्ड के अन्दर है।[8]

अवन्तीखण्ड

इसमे महाकालवन का आख्यान, ब्रह्माजी के मस्तक का छेदन, प्रायश्चित विधि अग्नि की उत्पत्ति देवताओं का आगमन देवदीक्षा नाना प्रकार के पातकों का नाश करने वाला शिवस्तोत्र कपालमोचन की कथा, महाकालवन की स्थिति, ककलेश्वर का महापापनाशक तीर्थ अप्सराकुण्ड, पुण्यदायक रुद्रसरोवर, कुटुम्बेश विध्याधरेश्वर तथा मर्कटेश्वर तीर्थ का वर्णन है, तत्पश्चात स्वर्गद्वार चतु:सिन्धुतीर्थ, शंकरवापिका, शंकरादित्य, पापनाशक गन्धवतीर्थ, दशाश्वमेघादि तीर्थ, अनंशतीर्थ हरिसिद्धिप्रदतीर्थ पिशाचादियात्रा, हनुमदीश्वर कवचेश्वर महाकलेश्वरयात्रा, वल्मीकेश्वर तीर्थ, शुक्रेश्वर और नक्षत्रेश्वर तीर्थ का उपाख्यान, कुशस्थली की परिक्रमा अक्रूर तीर्थ एकपादतीर्थ चन्द्रार्कवैभवतीर्थ, करभेषतीर्थ, लडुकेशतीर्थ, मार्कण्डेश्वरतीर्थ, यज्ञवापीतीर्थ, सोमेशवरतीर्थ, नरकान्तकतीर्थ, केदारेश्वर रामेश्वर सौभागेश्वर, तथा नरादित्य तीर्थ, केशवादित्य तीर्थ, शक्तिभेदतीर्थ स्वर्णसारमुख तीर्थ, ऊँकारेश्वरतीर्थ, अन्धकासुर के द्वारा स्तुति कीर्तन कालवन में शिव लिंगों की संख्या तथा स्वर्णश्रंगेश्वर तीर्थ का वर्णन है। कुशस्थली अवन्ती एवं उज्ज्यनीपुरी के पद्मावती कुमुद्वती अमरावती विशाला तथा प्रतिकल्पा इन नामों का उल्लेख है, इनका उच्चारण ज्वर की शान्ति करने वाला है, तत्पश्चत शिप्रा में स्नान आदि का फ़ल नागों द्वारा की हुई भगवान शिवकी स्तुति हिरण्याक्ष वध की कथा सुन्दरकुण्डतीर्थ नीलगंगा पुष्करतीर्थ विन्ध्यवासनतीर्थ पुरुषोत्तमतीर्थ अघनाशनतीर्थ गोमतीतीर्थ वामनकुण्डतीर्थ विष्णुसहस्त्रनाम कीर्तन वीरेश्वरतीर्थ कालभैरवतीर्थ नागपंचमी की महिआ नृसिंहजयन्ती कुटुम्बेश्वरयात्रा देवसाधककीर्तन, कर्कराजतीर्थ, विघ्नेशादितीर्थ, सुरोहनतीर्थ, का वर्णन किया गया है। रुद्रकुण्ड आदि में अनेक तीर्थों का निरूपण किया गया है, तदनन्तर आठ तीर्थों की पुण्यमयी तीर्थयात्रा का विवरण है। इसके बाद नर्मदा नदी का माहात्मय बताया गया है, जिसमें युधिष्ठर के वैराग्य तथा मार्कण्डेयजी के साथ उनके समागम का वर्णन है। इसके बाद पहले प्रलयकालीन समय का अनुभव का वर्णन अमृतकीर्तन कल्प कल्प में नर्मदा के अलग अलग नामों का

वर्णन नर्मदाजी का आर्षस्तोत्र कालरात्रि की कथा, महादेवजी की स्तुति अलग अलग कल्प की अद्भुत कथा, विशल्या की कथा, जालेश्वर की कथा, गौरीव्रत का विवरण, त्रिपुरदाह की कथा, देहपातविधि, कावेरी संगम, दारूतीर्थ, ब्रह्मवर्त ईश्वरकथा, अग्नितीर्थ सूर्यतीर्थ मेघनादादि तीर्थ दारूकतीर्थ देवतीर्थ नर्मदेशतीर्थ कपिलातीर्थ करंजकतीर्थ कुण्डलेशतीर्थ पिप्प्लादितीर्थ विमलेश्वरतीर्थ, शूलभेदनतीर्थ, अलग अलग दानधर्म दीर्घतपा की कथा, ऋष्यश्रंग का उपाख्यान, चित्रसेन की पुण्यमयी कथा, काशिराज का मोक्ष, देवशिला की कथा, शबरीतीर्थ, पवित्र व्याधोपाख्यान, पुष्कणीतीर्थ अर्कतीर्थ आदित्येश्वरतीर्थ, शक्रतीर्थ, करोटितीर्थ, कुमारेश्वरतीर्थ अगस्तेश्वरतीर्थ आनन्देश्वरतीर्थ मातृतीर्थ लोकेश्वर, धनेश्वर मंगलेश्वर तथा कामजतीर्थ नागेश्वरतीर्थ वरणेश्वरतीर्थ दधिस्कन्दादितीर्थ हनुमदीश्वरतीर्थ रामेश्वरतीर्थ सोमेश्वरतीर्थ पिंगलेश्वरतीर्थ ऋणमोक्षेश्वर कपिलेश्वर पूतिकेश्वर, जलेशय, चण्डार्क यमतीर्थ काल्होडीश्वर नन्दिकेश्वर नारायणेश्वर कोटीश्वर व्यासतीर्थ प्रभासतीर्थ संकर्षणतीर्थ प्रश्रेश्वरतीर्थ एरण्डीतीर्थ सुवर्णशिलातीर्थ, करंजतीर्थ, कामरतीर्थ, भाण्डीरतीर्थ, रोहिणीभवतीर्थ चक्रतीर्थ धौतपापतीर्थ आंगिरसतीर्थ कोटितीर्थ अन्योन्यतीर्थ अंगारतीर्थ त्रिलोचनतीर्थ इन्द्रेशतीर्थ कम्बुकेशतीर्थ, सोमतेशतीर्थ, कोहलेशतीर्थ, नर्मदातीर्थ, अर्कतीर्थ, आग्नेयतीर्थ, उत्तमभार्गवेश्वरतीर्थ, ब्राह्मतीर्थ, दैवतीर्थ, मार्गेशतीर्थ, आदिवाराहेश्वर, रामेश्वरतीर्थ, सिद्धेश्वरतीर्थ, अहल्यातीर्थ, कंकटेश्वरतीर्थ, शक्रतीर्थ, सोमतीर्थ, नादेशतीर्थ, कोयेशतीर्थ, रुक्मिणी आदि तीर्थों का विवेचन है। इसके साथ ही नागर खण्ड में भी तीर्थों का वर्णन है प्रभासखण्ड में विभिन्न नामों से शिवजी के स्थानों का विवेचन है।[9]

निष्कर्ष

कदा निलिम्पनिर्झरीनिकुंजकोटरे वसन्
विमुक्तदुर्मतिः सदा शिरःस्थमञ्जलिं वहन् ।
विलोललोललोचनो ललामभाललग्नकः
शिवेति मन्त्रमुच्चरन् कदा सुखी भवाम्यहम् ।।

अन्वय

विलोललोललोचनः अहं कदा निलिम्पनिर्झरी निकुंज कोटरे वसन् विमुक्त-दुर्मतिः सदा शिरस्थं अंजलिं वहन् ललामभाललग्नकः 'शिव ' इति मन्त्रं उच्चरन् सुखी भवामि। ।

भावार्थ

गंगातट पर पर्णकुटी में रह कर, हाथों की अंजलि माथे पर लगाते हुए मैं कब दुर्बुद्धि से मुक्त हो पाउंगा ? मेरे नेत्र बड़े चंचल हैं । अपने भाल पर तिलक लगा कर कब मैं शिवमंत्र के उच्चार करने का सुख पाउंगा ?

व्याख्या

शिवताण्डवस्तोत्रम्' के १३ वें श्लोक में स्तुतिकार रावण अविरल प्रेमयुक्त तरल-सरल भावों के साथ अपने मन की साध को प्रकट करता है । भाव-भीने मन से, खोया हुआ-सा वह सोचता है कि गंगाजी के तट के निकट किसी कुञ्ज-कुटीर में (पर्णकुटी में) वास करता हुआ मैं कब दुर्बुद्धि से मुक्त होऊंगा । कब हाथों में अंजलि ले कर उसे माथे से लगाउंगा ? मैं चंचल-अधीर नेत्रों से युक्त हूं अर्थात् मेरे नेत्र बड़े चंचल हैं, ऐसी स्थिति में कब मैं तिलकांकित पवित्र ललाट वाला हो कर अर्थात् माथे पर त्रिपुण्ड्र लगा कर (शिवभक्ति में एकाग्रमना हो कर), शिव-मन्त्र के उच्चार करने का सुख पाऊंगा ? ऐसा सुख मुझे कब लब्ध होगा ?

प्रस्तुत श्लोक इस तथ्य की ओर इंगित करता है कि आसुरी वृत्तियों के शिथिल अथवा विनष्ट हो जाने से शुभ विचारों का मन में आना स्वाभाविक हो जाता है और ऐसी स्थिति में यह सोच भी अवश्यम्भावी हो जाती है कि दुष्ट वृत्तियां उभर कर मन-बुद्धि को दूषित व उद्वेलित न करने पाएं । कुछ ऐसी ही सोच से प्रेरित रावण के मन में संजोई हुई साध अभिव्यक्ति की सतह पर तिरती हुए दिखाई देती है । वह सोचने लगता है कि न जाने कब मुझे भुवन-वन्द्या सुरतटिनी के तट के निकट वास करने का सुयोग प्राप्त हो और गंगा के कछार में वहीं कहीं, कूल के कुञ्ज-कानन में बस जाऊं ! वृक्षों के झुरमुट बीच लताच्छादित किसी पर्णकुटी में मेरा निवास हो तथा प्रतिदिन अंजलि को सादर मस्तक से लगा कर मैं भगवान शिव को जलांजलि अर्पण करूँ । मेरी दुष्ट बुद्धि न जाने कब मुझे विचलित करना छोड़ेगी । और ये चंचल नेत्र, क्या करूँ इनका, ये कब चलायमान होना छोड़ेंगे । कब आयेगा वह शुभ दिन जब मेरे भाल पर होगा त्रिपुण्ड्र तिलक तथा जिह्वा पर होगा भगवान शिव का नाम । उनके मंत्रोच्चार के साथ उनकी आराधना कर सुखी हो जाऊं, ऐसा न जाने कब होगा । वह विषय-विष से वियुक्त होकर देवतटिनी के तट पर पर्णशाला बना कर भजनानन्द रूपी मनःप्रसाद पाने की तीव्रेच्छा रखता है।

रावण द्वारा निलिम्पनिर्झरीनिकुंजकोटरे कहना ध्यातव्य है । भारतीय संस्कृति में जल व जलाशयों की महत्ता पुरातन काल से स्वीकार की जाती रही है । वेदों में पानी को 'विश्वभेषजं' कहा गया है, अर्थात् जल में समस्त औषधियां समाहित हैं । नदी, निर्झर, सरोवर, कूप, कासार, जलाशय आदि हमारी संस्कृति के अभिन्न अंग रहे हैं । उस पर भी देव अथवा देवस्थानों से सम्बद्ध नदियों की महिमा तो अतुलनीय व अवर्णनीय है । उनमें स्नान ,तर्पण, दीपदान करना व उनके तटों पर कथा, व्याख्यान, दान, ध्यान और धार्मिक संस्कारों व अनुष्ठानों का आयोजन अत्यधिक पुण्यदायी माना जाता है । स्कन्दपुराण में 'पुष्करिणी' में स्नान करने के विषय में पुराणकार का कथन है कि जिसने सहस्रों वर्षों का पुण्य अर्जित किया हो, वही पुष्करिणी में स्नान का सौभाग्य प्राप्त करता है । यहाँ स्नान कर के सद्य मुक्ति होती है । गोस्वामी तुलसीदास रामचरित मानस में सरयू नदी को नमन करते हुए उसे पाप नाशिनी नदी बताते हैं -"सरजू सरि कलि कलुष नसावनि"। आर्य संस्कृति नदियों के तटों पर फली, फूली और बढ़ी है । बड़े बड़े प्राचीन नगर नदियों के तटों पर ही समृद्ध हुए । जैसे सरयू के तट पर अयोध्या, क्षिप्रा-तट पर उज्जयिनी, गंगा और शोण नदी के संगम पर पाटलिपुत्र, त्रिवेणी-तट पर प्रयाग, यमुना-तट पर मथुरा । पंजाब तो सप्तसिंधु प्रान्त कहलाया ही । सहस्रनामों से पवित्र नदियों का स्तवन गया जाता

है । नदी, जलाशयों में स्नान करने के कई नियम ऋषियों ने बनाये, विधि-निषेध भी बताये, उन्हें स्वच्छ रखने के उपदेश दिये । नदियों की तो बात ही क्या है, घर ही में स्नान करते समय पवित्र नदियों के नाम-स्मरण की हमारे यहाँ पवित्र परम्परा है । जैसे,

गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिंधु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।

अर्थात् हे गंगा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती, नर्मदा, सिंधु, कावेरी नदियों ! (मेरे स्नान करने के) इस जल में (आप सभी) पधारिये । एक अन्य श्लोक भी बहुधा स्नान करते समय बोला जाता है, जो इस प्रकार है ।

गंगा सिंधु सरस्वती च यमुना गोदावरी नर्मदा
कावेरी सरयू महेन्द्रतनया चर्मण्यवती वेदिका।
क्षिप्रा वेत्रवती महासुरनदी ख्याता जया गण्डकी
पूर्णाः पूर्णजलैः समुद्रसहिताः कुर्वन्तु मे मंगलम् ।।

इस श्लोक का अर्थ भी यही है कि उपर्युक्त सभी जल से परिपूर्ण नदियां, समुद्र सहित मेरा कल्याण करें । गंगा की महिमा तो वर्णनातीत है । उसे प्रणाम कर अपना जीवन सार्थक करने की परंपरा अति प्राचीन है ।

नमामि गंगे ! तव पादपंकजं
सुरसुरैर्वन्दितदिव्यरूपम् ।
भुक्तिं च मुक्तिं च ददासि नित्यम्
भावानुसारेण सदा नराणाम् ।।

अर्थात् हे गंगाजी ! मैं देव व दैत्यों द्वारा पूजित आपके दिव्य पादपद्मों को प्रणाम करता हूँ । आप मनुष्यों को सदा उनके भावानुसार भोग एवं मोक्ष प्रदान करती हैं । यही नहीं, स्नान के समय गंगाजी के १२ नामों वाला यह श्लोक भी बोला जाता है, जिसमें गंगाजी का यह वचन निहित हैं कि स्नान के समय कोई मेरा जहाँ जहाँ भी स्मरण करेगा, मैं वहाँ के जल में आ जाऊँगी।

नंदिनी नलिनी सीता मालती च महापगा/
विष्णुपादाब्जसम्भूता गंगा त्रिपथगामिनी/।
भागीरथी भोगवती जाह्नवी त्रिदशेश्वरी/
द्वादशैतानि नामानि यत्र यत्र जलाशये/।
स्नानोद्यतः स्मरेन्नित्यं तत्र तत्र वसाम्यहम्/।
— (आचारप्रकाश, आचारेन्दु)

साधारण कूप, बावडी व अन्य जलाशयों के अलावा अन्य पवित्र नदियों के जल में भी गंगा के आवाहन को आवश्यक माना गया है। स्कन्दपुराण का कथन है,

स्नानकालेऽश्रन्यतीर्थेषु जप्यते जाह्नवी जनैः/
विना विष्णुपदीं कान्यत् समर्था ह्यघशोधने।

इसका अर्थ यह है कि अन्य तीर्थों में स्नान करते समय भी गंगा का नाम ही लोग जपा करते हैं , गंगा के बिना अन्य कौन पाप धोने में समर्थ है? अग्निपुराण के मतानुसार तीर्थ के जल से गंगाजल का जल अधिक श्रेष्ठ है , "तीर्थतोयं ततः पुण्यं गंगातोयं ततोऽधिकम्"। सहस्र नामों से पवित्र देवापगा गंगा के स्तवन गाये जाते हैं ,तथा अपने अघ-मर्षण की अभ्यर्थना की जाती है, दूध,गंध, धूप, दीप, पुष्प ,माल्य आदि से पूजा-अर्चना की जाती है। गंगा के भू पर अवतरण की तिथि पर गंग-दशहरा मनाया जाता है व स्नान-पुण्य आदि करके श्रद्धालु जन स्वयं को पवित्र करते हैं।

ज्येष्ठ मास उजियारी दशमी, मंगलवार को गंग
अवतरी मैया मकरवाहिनी, दुग्ध-से उजले अंग

परमेश्वरी भागीरथी के तीर पर किसी भी भांति रहने का सुयोग मिले, ऐसी अभिलाषा महर्षि वाल्मीकि ने भी 'श्रीगङ्गाष्टकम्' में व्यक्त की है। उनके शब्दों में,

त्वत्तीरे तरुकोटारान्तर्गतो गंगे विहंगो वरं
त्वन्नीरे नरकान्तकारिणि वरं मत्स्योऽथवा कच्छपः/

महर्षि गंगाजी से कहते हैं कि हे गंगे ! तुम्हारे तीर पर स्थित तरु के कोटर में रहने वाला विहंग बनना वरदायी है, हे नरक का अंत करने वाली ! तुम्हारे जल में मछली अथवा कछुआ बन कर रहना भी वरदायी है। भगवती भागीरथी का महिमा-गान हमारे आर्ष-ग्रंथों ने मुक्त-कंठ से किया है। इसी 'मदनमथनमौलेर्मालतीपुष्पमाला (यह नाम गंगाष्टकम् में है) गंगा के तटवर्ती प्रांत के कुञ्ज-उपवन में वास करने का भावमय मनोरथ शिवभक्त रावण करता है। वहां ऊंची अट्टालिकाओं वाला सौध बना कर नहीं अपितु कहीं निकुंज-कोटर में रह कर शिवाराधन करना चाहता है। अपने मन का कल्मष-कालुष्य सब मिटा कर, सद्बुद्धि ग्रहण कर वह सर पर सादर अंजलि धर कर शिवार्चन का सुख पाना चाहता है। एक शिव-परायण भक्त ही की भांति चंचल-नेत्र, चलित-चक्षु रावण भी अपने माथे को त्रिपुण्ड्र से भूषित करने की कामना करते हुए सोचता है कि यह सब कर पाने का सौभाग्य मैं कब पाऊंगा उसे इस क्रिया-कलाप में, शिवमंत्र के उच्चार में सुख ही सुख की प्रतीति होती है।

अमित ऐश्वर्य और अपार शक्ति के स्वामी रावण ने देवताओं, ग्रहों को बंदी बना लिया था, त्रिलोकी में उसके लिए कोई भी इच्छित पदार्थ दुर्लभ नहीं था। भक्त लेखक श्री सुदर्शनसिंह 'चक्र' अपने उपन्यास पलक झपकते में रावण के लिये लिखते हैं, "त्रेता में दशग्रीव प्रबल हुआ तो उसने जलाधीश वरुण को ही लंका की सिंचाई-स्वच्छता में नियुक्त कर दिया।" ऐसा अमित वीर्य-विक्रम एवं ससद्वीपाधिपति पंक्तिग्रीव (दशग्रीव) किस सुख की प्राप्ति हेतु उत्कंठित है, यह प्रश्न स्वतः मन में उठता है। वस्तुतः उसके पिता विश्रवा मुनि के सद्संस्कारों का आकर्षण प्रबल है, जो उसे मथते हैं। भगवान महाकपाली, चन्द्रशेखर से जब वह अपनी सम्पदा, अपनी श्री की रक्षा की अभ्यर्थना करता है, तब भी उस सम्पदा का अटूट भाग होता है उसका हृदयस्थ भक्तिभाव, जिसे वह कदापि खोना नहीं चाहता। अपनी आस्था के ऐश्वर्य से

दिनानुदिन व अधिकाधिक समृद्ध होना उसका श्रेय और प्रेय है। राक्षसाधिप रावण अपने मन की अशुचि आकांक्षाओं से भलीभांति परिचित हैं। इसीलिये विलोललोललोचनो ललामभाललग्नकः कह कर अपने अन्तःकरण की चंचलता को व्यक्त करता है। उसके अपने प्रति इस प्रकार कहे जाने से एक और अर्थ भी निष्पन्न होता है, वह यह कि मैं कब मेरे लोल-लोचन न जाने कब वाष्प-गदगद होंगे अर्थात् प्रेमाश्रुओं से तरल होंगे तथा कब मैं न जाने कब ललाम अर्थात् सुन्दर व मंगल त्रिपुण्ड्र तिलक से अपने भाल को युक्त करूंगा ! दोनों ही अर्थों से आशय यह है कि वह अपने हृदय में भगवान शंकर की निर्भरा भक्ति के उद्रेक के पर्याकुल है। रावण का मन शिव के नाम से उपराम नहीं होना चाहता। अतः जहाँ शिव के चरण पखारती देवापगा गंगा प्रवाहित हो रही हो ,वहीं उसकी सुख-स्थली है। वहीं मानो उसका भक्ति-पूत मन कैलाशपति के पुण्य-पादपद्मों को अपने प्रेमाश्रुओं से सिक्त करने के लिए विकल है। नेत्रों से झरते मुक्ताओं से उनके पद चर्चित कर, अपने अंतःकालुष्य से निवृत्त होना चाहता है राक्षस-शार्दूल रावण। वह उच्च कोटि का विद्वान था व उसे भलीभांति विज्ञ था कि लक्ष्मी जल की तरंगमाला की तरह चपल है, अतएव मन में भक्ति रूप से निवास करने वाली श्री की उसे स्पृहा है, जिससे उसे अपने प्रिय कैलाशविहारी का सानिध्य सुलभ हो। यही सानिध्य, यही सौलभ्य, यही सौख्य उसका काम्य है।[9]

संदर्भ

[1] "गीताप्रेस डाट काम". मूल से 25 जून 2010 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 12 मई 2010.

[2] स्कन्द पुराण, गीताप्रेस गोरखपुर

[3] स्कन्दमहापुराणम्, चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, वाराणसी, संस्करण-2003 ई०, जिल्द-1 से 6 तक की भूमिकादि में परिलक्षित।

[4] श्रीस्कन्दमहापुराणम्, खंड-8 (श्लोकानुक्रमणिका खंड), नाग प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली-7, पंचम संस्करण-2013, (आवरण के बाद मुखपृष्ठ पर उल्लिखित)।

[5] 'स्कन्दपुराण, (सरित SARIT का प्रकल्प)

[6] स्कन्दपुराण का मूल पाठ

[7] वेद एवं वेदांग - आर्य समाज, जामनगर के जालघर पर सभी वेद एवं उनके भाष्य दिये हुए हैं।

[8] स्कन्दपुराण परियोजना

[9] संक्षिप्त स्कन्द पुराण